भक्त हृदय के उद्‌गार

कहते हैं सखी श्याम मेरे, अनन्य भक्ति गर हो जाये।
हर पल उनको याद करे, तो श्याम तेरा ही हो जाये।।

श्याम से कह दो सखी मेरी, ऐसे बहाने क्यों लगाये।
इक बेरी गर वह आ जाये, तो मन मेरा कहीं न जाये।।

तुम क्यों कहते हो राम मेरे, पहले मन को लगाऊँ मैं।
बिन दर्शन यह मन नाहीं लगे, तो तुम ही कहो कहाँ जाऊँ मैं।।

तुम जानत हो श्याम मेरे, गर तुम सामने आओगे।
सब विषयन् को छोड़ करी, मन अपने चरण में पाओगे।।

क्या कहूँ तुझे मैं राम मेरे, यह तो मैं जानूँ न।
इक बात पूछूँ तोसों मैं राम, क्यों मेरी मानो न।।

बार बार तुझे कहती हूँ, तू इक भी मानो न।
मेरी अन्तिम घड़ियाँ हैं, क्या तुम इतना जानो न।।

-परम पूज्य माँ
श्रीमद्भगवद्गीता, द्वितीय अध्ययन, 11/54

अनुक्रमणिका

1. भक्त हृदय के उद्गार..
कहते हैं सखी श्याम मेरे..

3. कैसे मनाऊँ जन्म दिवस

4. जैसे कछुआ सब ओर से अपने अंगों को अपने में समेट लेता है..
श्रीमद्भगवद्गीता- भगवद् बाँसुरी में जीवन धुन, अध्याय - 2/56-59

10. यज्ञशेष तुम किसे कहो, क्योंकर धारण उसे करूँ..
परम पूज्य माँ से पिताजी के प्रश्नोत्तर

15. द्वैत अद्वैत
पूज्य छोटे माँ

21. ..अनेकों नाम और रूप नद, पर्वत शिखर पे धारे है!
मुण्डकोपनिषद्, द्वितीय मुण्डक 1/9

26. आपने जन्म लेकर, हमारे तद्रूप हो कर के हमें हमीं से उठाया है!
श्रीमती पम्मी महता

29. आन्तर दर्शन
श्रीमती शान्ता देवी

33. आश्चर्यवत् पश्यति..
डॉ. जे के महता

36. श्याम ने देख री जन्म लिया

37. अर्पणा समाचार पत्र

सम्पादक की ओर से

गद्य में प्रस्तुत सभी लेख साधकों के प्रश्नों के उत्तर में परम पूज्य माँ द्वारा प्राप्त सत्संगों पर आधारित हैं और संकलन-कर्ता की निजी समझ के अनुकूल हैं। काव्य की पंक्तियाँ पूज्य माँ के मुखारविन्द से प्रवाहित दिव्य प्रवाह का अंश हैं; जिसे सुश्री छोटे माँ ने लेखनी बद्ध किया है । अपनी पूर्ण सामर्थ्य के अनुसार उसे ज्यों का त्यों प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुति में किसी भूल के लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं।

सम्पादक : *पूनम मलिक*

सह सम्पादक : *श्रीमती साधना पाल*

पता : अर्पणा आश्रम, मधुबन, करनाल,
132 037, हरियाणा भारत

श्री हरीश्वर दयाल, अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन, करनाल 132 037 01, हरियाणा द्वारा अगस्त 2022 को प्रकाशित तथा सोना प्रिन्टर प्राईवेट लिमिटेड, एफ -86/1, ओखला इण्डस्ट्रियल एरिया फेज़-1, नई दिल्ली 110 020 द्वारा मुद्रित

कैसे मनाऊँ जन्म दिवस

जन्म दिवस तुम्हारा आज, राम मेरे कैसे मनाऊँ।
क्या मैं गाऊँ लोरी सुनाऊँ, भिक्षा माँगूँ दामन फैलाऊँ।।

कभी सोचूँ राम मेरे, घुंघरू पहन के नाचा करूँ।
कभी सोचूँ खड़ताल पकड़ के, गीत तुम्हारे गाया करूँ।।

कभी सोचूँ राम मेरे, प्रीत से तुझे बुलाया करूँ।
कभी सोचूँ भगवान मेरे, कस दर्शन तोरे पाया करूँ।।

निगाह में मेरे राम बसें, तो ही तो तोरा जन्म होये।
हृदय में तेरा नाम बसे, तो ही तो यह जन्म होये।।

कर में तोरा नाम हो, तो ही तो तोरा कर्म भये।
जब पूर्ण जग तेरा भये, तो ही तो तेरा जन्म होये।।

अर्पणा प्रकाशन - राम आवाहन

❖ ❖ ❖

जैसे कछुआ सब ओर से अपने अंगों को अपने में समेट लेता है..
वैसे ही स्थितप्रज्ञ सब ओर से इन्द्रियों को समेट लेता है..

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ।।

श्रीमद्भगवद्गीता - 2/56

यहाँ भगवान स्थितप्रज्ञ के चिह्न बताते हुए कहते हैं :

शब्दार्थ :

1. दुःख में क्षुब्ध न होने वाले मन वाला,
2. सुख में संग रहित (और)
3. राग, भय और क्रोध रहित,
4. स्थितधी, स्थितप्रज्ञ मुनि कहलाता है ।

तत्व विस्तार :

मन की ही बात कह रहे हैं भगवान, फिर मनोस्थिति की बात कहते हैं।

'साधना' मन को होता है या सत् पथ पर लाना मन को होता है। साधना का राज़ पुनः कहते हैं। वास्तव में जो सब कह आये हैं उसी को यहाँ पुनः बता रहे हैं कि मनोवृत्ति निरुद्ध करोगे तो बाक़ी शुद्ध बुद्धि रह जायेगी। अब पुनः यहाँ कहते हैं कि :

दुःख रहित :

1. विपरीतता, जो दुःख देती है, अरुचिकर जो दुःख देता है, उसे देख कर, उसे पाकर जिसका मन :

क) पीड़ित नहीं होता,

ख) दुःखी नहीं होता,

ग) शोक ग्रस्त नहीं होता,

घ) विक्षिप्त नहीं होता,

ङ) घबरा नहीं जाता,

च) ईर्ष्या, शत्रुता, द्वेष से नहीं भर जाता,

छ) दूसरे को बुरा जान कर अपना मुखड़ा वहाँ से फेर नहीं लेता,

यानि इन सबको पाकर वह क्षुब्ध नहीं हो जाता।

सुख जो मिले जीवन में वह :

1. संग रहित ही रहता है।
2. सुख देने वाले विषय के प्रति संग नहीं उठ आता उसका।
3. लोलुप्त नयन से नहीं देखता वह सुख देने वाले विषय को।
4. 'कबहुँ न बिछुड़े यह सुख हमसे', ऐसे भाव में वह नहीं रहता।
5. सुख की भी तृष्णा वह नहीं करता।

राग रहित अर्थात् रुचिकर से संग रहित होता है। भय रहित है वह! अब किसका भय उसको हो सकता है जीवन में?

क) क्या बिछुड़े या मिले तन को, अब उसका तो कोई तन ही नहीं।

ख) तन ही उसका नहीं रहा तो सुख दुःख भी उसके नहीं रहते।

ग) मृत्यु भय भी चला गया क्योंकि तन से नाता ही नहीं रहा।

घ) भय तन के कारण होता है, अब भय का कारण ही मिट गया। भय अब किस कारण करें जब भय का मूल ही मिट गया?

क्रोध रहित :

क्रोध भी अब नहीं आता उसे :

1. रुचिकर न मिले, तब क्रोध आता है। जब रुचि अरुचि से ही संग नहीं रहा, तो क्रोध कैसा?
2. अरुचिकर मिले तो क्रोध आता है, अब वह बात ही नहीं रही।
3. कुछ पाना हो और न मिले तो क्रोध आता है, पर अब कुछ पाना ही नहीं रहा।
4. वाद विवाद में पड़ जायें और फिर जीत न सकें तो क्रोध आता है, अब अपनी बात ही नहीं रही।
5. अपनी बात समझा न सकें तो क्रोध आता है, पर अब कोई समझे या न समझे, कोई फ़र्क़ ही नहीं पड़ता।
6. कोई न्यून कह दे तो क्रोध आता है, अब न्यून श्रेष्ठ तन के साथ ही चले गये।
7. जब न्यूनता अपनी छिपा न सकें तो क्रोध आता है, अब वह बात गई।
8. स्वयं निर्बल हों तो क्रोध आता है, अब बल तथा निर्बलता भी तन के साथ चले गये।
9. जब मान चला जाये तो क्रोध आता है, तन ही अपना चला गया, अब क्रोध कौन किस पर करे?

भगवान कहते हैं, 'जो दुःख से क्षुब्ध नहीं हों, सुखों से संग न करें और राग, भय और क्रोध रहित हों, वह मुनिगण स्थित बुद्धि कहलाते हैं।'

नन्हीं! इसे फिर से समझ ले !

जो तनत्व भाव के त्याग के प्रयत्न कर रहे हैं, वह इन गुणों से परे होते हैं। तनत्व भाव के अभाव का अभ्यास भी जीवन में तनत्व भाव के अभाव को मानते हैं । राग द्वेष के अभाव का अभ्यास भी जीवन में राग द्वेष को छोड़ने में है । लक्ष्य का अभ्यास ही साधक को उसके लक्ष्य में स्थित करवा देता है।

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम् ।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ।।

श्रीमद्भगवद्गीता - 2/57

स्थितप्रज्ञ, नित्य समाधि स्थित की स्थिति बताते हुए भगवान कहते हैं, हे अर्जुन!

शब्दार्थ :

1. **जो सर्वत्र स्नेह रहित हुआ,**
2. **शुभ और अशुभ को प्राप्त होकर,**
3. **न हर्ष करता है, न द्वेष करता है,**
4. **उसकी बुद्धि स्थिर है ।**

तत्व विस्तार :

जिसे, यदि शुभ मिल जाये तो वह महा मुदित होकर उससे अनुराग नहीं करता, यदि अशुभ मिल जाये तो वह द्वेष पूर्ण होकर उससे घृणा रूपा संग नहीं करता, वह स्थितप्रज्ञ होता है ।

शुभ :

नन्हीं! प्रथम शुभ को समझ लो!

शुभ का अर्थ है :

1. जो कल्याणकारक हो ।
2. जो मंगलकारक हो ।
3. जो समृद्धि देने वाला हो ।

जीवन में शुभ वह होगा, जो आपके सौभाग्य को प्रदुर करे तथा आपको प्रतिष्ठा देने वाला हो ।

अशुभ :

अब अशुभ समझ ले! शुभ के लिये जो कुछ भी कहा, उसका विपरीत अशुभ कहलाता है ।

भगवान कहते हैं स्थितप्रज्ञ को जीवन में शुभ मिल जाये या अशुभ मिल जाये, वह दोनों को जीवन में बराबर समझता है । शुभ पाकर वह:

क) इतराता नहीं ।

ख) अभिमान पूर्ण नहीं हो जाता ।

ग) शुभ से संग नहीं कर लेता ।

घ) जीवन में शुभ से बिछुड़ने से डरता नहीं, **'अशुभ'** जिसे वह :

1. अरुचिकर जानता है,
2. अकल्याणकारक जानता है,
3. अमंगलकारक जानता है,
4. मलिन तथा अपावन भी जानता है,
5. पापपूर्ण तथा दुर्भाग्य को उत्पन्न करने वाला भी जानता है,

वह स्थितप्रज्ञ ऐसे अशुभ गुणों से पूर्ण लोगों अथवा परिस्थितियों से भी द्वेष नहीं करता।

उसे जैसा भी और जो भी मिल जाये, वह उसे उदासीन भाव से स्वीकार करता है । न वह किसी भी परिस्थिति से भागना चाहता है और न ही वह किसी भी परिस्थिति से संग करके उसे बनाये रखना चाहता है । वह तो पूर्णतय: '**अनभिस्नेह**' है ।

यानि :

1. आसक्ति रहित है ।
2. अभिलाषा रहित है ।
3. अनुराग रहित है ।

नन्हीं! यह तब ही हो सकता है यदि जीव अपने तनत्व भाव से परे हो जाये। याद रहे, यहाँ स्थितप्रज्ञ, नित्य समाधिस्थ के चिह्न बता रहे हैं। भगवान कहते हैं कि ऐसे निरासक्त की बुद्धि ठहरी हुई होती है।

मेरी नन्हीं जान्! यह उस समाधिस्थ के जीवन की सहज स्थिति बता रहे हैं। जीवन में उन्हें जो और जैसा भी मिल जाये, वे राग द्वेष में नहीं बंध जाते। वे तो जो जैसा आये, उसके लिये जो उचित हो, निरपेक्ष भाव से वैसा ही कर देते हैं। वे चलते फिरते, सब काम करते हुए भी सम भाव में ही रहते हैं। उनके जीवन में ही यह प्रमाण मिलता है।

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।

श्रीमद्भगवद्गीता - 2/58

भगवान कहते हैं :

शब्दार्थ :

1. **जैसे कछुआ सब ओर से अपने अंगों को अपने में समेट लेता है,**
2. **वैसे ही जब यह (स्थितप्रज्ञ)**
3. **सब ओर से इन्द्रियों को इन्द्रियों के अर्थों से समेट लेता है,**
4. **तब उसकी बुद्धि स्थिर होती है।**

तत्व विस्तार :

नन्हीं!

1. जीव का विषयों से सम्पर्क इन्द्रियों के राही ही होता है।
2. जीव को संसार की प्रतीति भी इन्द्रियों राही होती है।
3. तन की इन्द्रियाँ ही जीव को स्थूल विषयों के गुण सुझाती हैं।
4. मन इन्द्रियों के राही ही विषयों का उपभोग करता है।
5. मन इन्द्रियों के राही ही विषयों को जान कर उन्हें पसन्द या नापसन्द करता है।
6. मन ही इन्द्रियों को बार बार विषयों से सम्पर्क कराने के लिये भेजता है।
7. स्थूल में इन्द्रियाँ विषयों से ज्ञान लाती हैं और मन उनके इस ज्ञान का उपभोग करता है।
8. मन को ही कोई विषय पसन्द आता है और मन ही किसी अन्य विषय को पसन्द नहीं करता।
9. जो विषय मन को पसन्द आया, मन इन्द्रियों को उसी ओर जाने के लिये प्रेरित करता है।
10. शनैः शनैः, मन इन्द्रियों राही जिस विषय का रस पीता रहा है, उसी विषय के आश्रित हो जाता है। क्योंकि वह विषय मनोरोचक होता है, इस कारण विषय रस रसिक मन उस विषय की रसना में बंध जाता है। तब वह विषय उस जीव के लिये मानो ज़रूरी हो जाता है। क्यों न कहें वह जीव स्थूल विषय के आश्रित हो जाता है।

स्थितप्रज्ञ तो अपने तन से ही नाता छोड़ देते हैं। जैसे कछुआ सब ओर से अपने अंगों को अपने में समेट लेता है, वैसे ही स्थितप्रज्ञ, तन मरे या जिये, उसकी परवाह नहीं करता। वह तो अपने आपको मन से भी दूर कर लेता है। मन तो इन्द्रिय पुंज है ही और इन्द्रिय सम्पर्क तो विषयों से होता ही रहता है। स्थितप्रज्ञ बार बार ध्यान लगा कर इन्द्रियों को विषयों से दूर करने की चेष्टा करता है। वह तो तन को गुण रचित, जड़ तथा मृत्यु धर्मा जान कर और अपने आपको आत्मा मान कर तनत्व भाव से मानो 'मैं' को ही खींच लेता है।

उसकी बुद्धि, तन या मन की इन्द्रियों से लिपायमान नहीं होती और वह विषयों से प्रभावित नहीं होती।

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते।।

श्रीमद्भगवद्गीता - 2/59

शब्दार्थ :

1. **निराहारी जीव विषयों से ही निवृत्त होता है,**
2. **किन्तु स्थितप्रज्ञ परमात्मा को देखकर,**
3. **इन स्थूल विषयों की रसना से ही उठ जाता है।**

तत्व विस्तार :

निराहारी :

1. निराहारी विषय छोड़ देता है।
2. मुखड़ा उनसे मोड़ लेता है।
3. पर मन में चाहना छुपी रहती है।
4. उस रसना का क्या करें, जो बार बार विषयों को देख कर उठ आती है?
5. घोर तप, घोर त्याग किये, विषयों से दूर भी रहे, किन्तु रसना नहीं जाती।
6. जब तक तन के साथ इन्द्रियाँ भी हैं, तब तक रसना नहीं जा सकती।
7. विषय त्याग की बात नहीं, इन्द्रियों का सम्पर्क तो विषयों से रहेगा ही! फिर भगवान क्या कहते हैं?

रसना मन से सम्बन्ध रखती है :

क) रस की रसना छूट जानी चाहिये।
ख) मनो उपभोग तू छोड़ दे।
ग) मन में सूक्ष्म रस से संग करना छोड़ देना चाहिये।
घ) यदि मन राग द्वेष से रहित हो, तो सहज में रस से संग भी मिट जाता है।
ङ) विषय सम्पर्क से तेरे मन में कोई प्रतिक्रिया न हो, तब जानो संग नहीं।
च) जब मन ही न हो स्थूल विषयन् में, तब जानो आपको संग नहीं।
छ) जब आपको रस की रसना नहीं रहे, तो कौन रस लाये आन्तर में?

इस कारण वह कहते हैं :

1. जब आत्मवान होने लगे तब मन रसना रसिक नहीं रहता।

2. जब मन बुद्धि की बात माने तब भी यह रसना रसिक नहीं रहता।

3. जब यह मन परम की ओर बढ़ जाये तब यह रसना रसिक नहीं रहता।

4. परम भक्ति मन में उठ आये तब भी मन रसना रसिक नहीं रहता।

5. जब भक्ति उठ आती है तब विषयानुरक्ति भूल जाती है।

6. जब हर वृत्ति आत्मा की ओर बढ़ने लगे तब स्थूल भूलने लगता है।

7. जब जीव आत्मवान हो जाता है तब स्थूल सभी कुछ भूल जाता है।

8. जब मन ही अपना नहीं रहता तो कौन विषय उपभोग करे, कौन विषय को याद करे?

9. अहं ही आज तड़प गया कि मैं तन नहीं हूँ तो तन से क्यों बंधा हूँ?

10. आत्मा से जब मेरा योग हो गया तब तनत्व भाव मिट जायेगा।

11. आत्मा ही बाक़ी रह जाये और सब कुछ भूल जाये मुझे।

12. मेरा नामोनिशान नहीं रहे, यह तब ही हो यदि मैं तनत्व भाव छोड़ दूँ।

13. आत्मवान मुझे बनना है, अब तन की बातें क्यों अपनाऊँ मैं?

14. ज्ञान से ख़ुद को पावन करना है तो साधक पल पल 'मैं तन नहीं हूँ' की आहुति देता रहता है।

15. दैवी सम्पदा का श्रृंगार करके जीवन में वह नित्य उसका अभ्यास करता रहता है।

16. माँग में माँग सत् की भर कर, वह तो सत् स्वरूप आत्मा से योग करने के लिये बढ़ता है।

दुल्हनिया आत्म मिलन चली,
वह अपना आप ही भूल गई ।।
प्रेम में वह मदमस्त हुई,
नाम रूप निज भूल गई ।।

- आत्मा से योग ही साधक की पुकार है।
- आत्मा से योग ही साधक का मिलन है।
- आत्मा से योग ही साधक का सुहाग है।

योग सफल हो जाने पर केवल आत्मा रह गया। तब साधक को अपनी नितान्त विस्मृति हो जाती है और साधक की देहात्म बुद्धि का नितान्त अभाव हो जाता है। फिर तन से क्या किया, या तन से किसी ने क्या किया, इन दोनों के प्रति वह मौन हो जाता है। तब वह मन की किसी भी प्रतिक्रिया को नहीं अपनाता, मन के किसी भी गुण को नहीं अपनाता।

भई! तब उसका तन होता ही नहीं, वह अपनाये भी तो कैसे? तब तो वह तन रूप विषय से भी परे हो गया । तब 'मैं' तन रूपा विषय का रसपान नहीं कर सकती और उस पर इतरा नहीं सकती, तब 'मैं' तन रूपा विषय से घबरा भी नहीं सकती।

नन्हीं! जब वह तन ही नहीं तो तनो विषय भी गया, बाकी आत्मवान ही रह जाता है। वह स्थितप्रज्ञ है ।❖

यज्ञशेष तुम किसे कहो, क्योंकर धारण उसे करूँ..

(यज्ञशेष)

पिता जी

गीता में भगवान ने कहा है:
यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम् । (4/31)

यह यज्ञ-शेष अमृत किसे कहते हैं जिसको भगवान की प्राप्ति का साधन बताया है? मनुष्य किस तरह से इसको जीवन में धारण करे?

सारांश - दूसरे पुरुष अर्थ, यानि पुरुषार्थ में, निजी आहुति ही यज्ञ है। उस यज्ञ के पश्चात् निरासक्ति, समत्व भाव, तृप्ति, निःसंगता जैसे अनेकों गुण, जो जीव में स्वतः प्रदुर हो जाते हैं, वही उस यज्ञ का शेष है; उनके भक्षण से मानो वह ब्रह्म को पा जाता है ।

प्रश्न अर्पण

यज्ञशेष तुम किसे कहो, क्योंकर धारण उसे करूँ।
तूने कहा धारण किये, अमरत्व को मैं पा लूँ।।1।।

कौन यज्ञ है आप कहो, किस विधि यज्ञ यह होये है।
कौन आहुति उसमें दूँ, जो सफल वह होये है।।2।।

तत्व ज्ञान

दूजे के लिए जो भी किया, यज्ञ उसे तुम कह लो।
ब्रह्म हिय धरी जो भी किया, पुरुष अर्थ तुम यज्ञ कहो।।3।।

स्वार्थ त्यजी करो पुरुष अर्थ, फिर परम अर्थ भी हो जाये।
जितनी जितनी 'मैं' घटे, नाम बदलता ही जाये।।4।।

अपनी आहुति जिसमें दो, यज्ञ वही है जान लो।
अन्य भले को निज क्षति हो, आहुति उसको जान लो।।5।।

ब्रह्ममय जग जान करी, ब्रह्म पे जो अर्पित करो।
इन्द्रिय चेष्टा मन बुद्धि कर्म, ब्रह्मयज्ञ आहुति जो हो।।6।।

यज्ञ शेष जो भी रहे, अमृत वह कहलाता है।
'मैं' को भी जो गलित करे, वह गंगाजल बन जाता है।।7।।

निरासक्ति वह अमृत है, तन से जो तुझे दूर करे।
सिद्धि असिद्धि समत्व भाव, ब्रह्म का अमृत भये।।8।।

नित्य तृप्ति निःसंगता, संतुष्टि ही शेष रहे।
समत्व बुद्धि योग युक्त, यज्ञ शेष सों सफल भये।।9।।

ज्ञानविज्ञान सहित-

जीवन ही यह यज्ञ भये, हर कर्म आहुति में गर दे।
ज्ञान अग्न जलाये करी, मन समिधा उस में जले।।10।।

'मेरा' नहीं यह 'मैं' का नहीं, इस भाव का वहाँ घृत पड़े।
जो भी करे भगवान करे, भावना में यह मन्त्र भरे।।11।।

जहाँ भी नयना फिर जायें, देखी कहे मन राम राम।
प्रतिकार झंकार न हो मन में, करनी देखे जो करे राम।।12।।

इक 'मैं' मेरा मोह ही है, जो यज्ञ नहीं यह होने दे ।
ब्रह्मतत्व और 'मैं' मिलन, यज्ञ राह में भंग कर दे ।।13।।

संग बिना फिर चाह बिना, जो मिले स्वीकार करे ।
अहं का सीस झुका करके, जग के सगरे काज करे ।।14।।

तब ही यज्ञमय सब होये, फिर शेष कहाँ रह पायेगा।
जब 'मैं' ही शेष नहीं रहा, बिन शेष के सब रह जायेगा।।15।।

शेषनाग पर कहते हैं, भगवान शयन नित करते है।
और शेषनाग पर भूमि राह, नित्य नृत्य वह करते हैं।।16।।

नाग खूँटी को तुम कह लो, वहाँ शेष 'मैं' जब नहीं रहे।
खूँटी सों यज्ञवत् जानो, तोरा जग लिपटा रहे।।17।।

यज्ञ में पूर्ण जो मिला, समिधा बन कर जल जाये।
'मैं' बले मेरा मोह बले, मनो छल कपट भी जल जाये।।18।।

वस्तु त्याग की नहीं कहें, वृत्तियन् को तुम रोक लो।
मन चंचल मोहित है यह, मनोप्रवाह को तुम रोको।।19।।

यह मनोप्रवाह आहुतिवत्, इक इक वृत्ति चढ़ाओगे।
मौन भये जब मन तेरा, यज्ञमय तुम हो जाओगे।।20।।

पावन स्वतः हो जाओगे, जो बाक़ी रहे वह राम रहे।
'मैं' मेरे से उठ गए, जो बाक़ी रहे भगवान रहे ।।21।।

प्रेम की राह से यज्ञ करो, मन निरुद्ध हो जायेगा।
सत्त्व सों प्रेम जो हो गया, असत् सों बेसुध हो जायेगा।।22।।

प्रेम मुदित गर मन भये, इक वृत्ति को प्रेम जो हो जाये।
हर वृत्ति उस प्रेम वृत्ति, के चरण में आ जाये।।23।।

स्वतः ही मन निरुद्ध भये, फिर क्या मिले क्या नहीं मिले।
जो भी दे वह राम ही दे, और राम जो चाहे आप ही ले।।24।।

वह शेष जो है वह राम है, और राम ही वह भोगे है।
'मैं' मिटी जिस पल मनुवा, भगवान ही वह भोगे है।।25।।

आंतर आसन आन लगे, आंतर बैठ के मन देखे।
मोरी वृत्ति कहाँ राम चली, आपुनो वृत्ति को मन देखे।।26।।

निहित चाह निज देख करी, वृत्ति लौटा वह लाता है।
ध्यान वृत्तियन् पे जानो, साधक तब लगाता है ।।27।।

मनो आसन पर बैठ करी, आन्तर में जा यज्ञ करो।
हर वृत्ति गर लौट आये, विष रहित हर विषय ही हो।।28।।

यह संग मोह ही जान मना, विषपूर्ण हर विषय करे।
जिस पल संग नहीं रहे, अमृतमय सब जग भये।।29।।

गर प्रीत हुई तो सहज में ही, हर वृत्ति लौट आयेगी।
राम को सत्य ही गर जाना, वा चरण में लिपट वह जायेगी।।30।।

ध्यान लगा के निज मन पे, निज बुद्धि राही मन निरखो।
मन है क्या वहाँ चाह है क्या, मन पाछे चाहना निरखो।।31।।

चाह निरख कर चाहना का, स्वरूप आप फिर देख लो।
जो होये होये सो होये, बुद्धि राह से देख लो।।32।।

इसी विधि ही अपना मन, निरुद्ध गर तुम कर लो।
फिर जो मिले सो मिले, मन राही तुम मौन रहो।।33।।

यह मौन राम है मौन सत्, मौन प्रेम भी होये है।
समर्पण मौन का नाम है, समर्पण यज्ञ ही होये है।।34।।

सहज सहज में 'मैं' मिटे, वहाँ राम आप रह जायेगा।
जो मिला है राम दिया, मन दृढ़ता इसमें पायेगा।।35।।

गर दृढ़ इसी में हो गया, सब राम का ही हो जायेगा।
जब राम का राम को दे दिया, यज्ञ सफल हो जायेगा।।36।।

फिर शेष रहा तो क्या रहा, जो रहा वह देख न पायेगा।
वह बात करे इठलाये भी, पर कर्म परे हो जायेगा।।37।।

स्वरूप यज्ञ का यह ही है, मन को समिधा बनाइये।
भाव का घृत तब डार करी, आहुति देते जाइये।।38।।

यह यज्ञ भी समझ लो, दूजा कर नहीं पायेगा।
वही सफ़ल भये यज्ञ में, जो आप ही करने जायेगा।।39।।

दूजे का यज्ञ तो इतना हो, कोई कहे आन्तर जा देखो।
मन में आपुनो आप ही, आसन तुम लगा देखो।।40।।

कहें ध्यान लगाया करो, और वृत्तियन् का निरोध करो।
यह दूजा नहीं कोई कर सके, सफल भये गर तुम करो।।41।।

या मन में बैठ के आपुनो, वृत्तियन् को लौटा तू ले।
पावन अपने मन को तू, अपने आप बना ही ले।।42।।

रुचिकर विधि यह सहज विधि, हँसकर तेरी निभ जायेगी।
गर नाम राम का मन ने लिया, हँस के वृत्ति लौट आयेगी।।43।।

राम प्रेम फिर जानिये, बस अपने से ही प्यार है।
जो गुण आप में हैं नहीं, वही तो राम आधार है।।44।।

गुणन् समूह सम्पूर्ण, निर्गुणिया के गुण हैं जो।
अपने में जो न देख सको, उस गुण पुँज को राम कहो।।45।।

निज में जो गुण माने हो, क्या हैं वहाँ यह देख लो।
निज मान्यता रचित वह गुण, अपने आप को देख तो लो।।46।।

संग मोह और अहंकार, की आहुति अब तुम दो।
शेष राम रह जायेंगे, जीवन वा गुण भरपूर हो।।47।।

नित्य तृप्ति नित्य संतुष्टि, उदासीनता वा गुण हैं।
यज्ञ सफल जिसका हुआ, यह उसके ही तो गुण हैं।।48।।

मान्यता तोरी आपुनो, गर सत्य में टिक जायेगी।
तो बाह्यप्रज्ञ इक भी वृत्ति, वहाँ पे टिक नहीं पायेगी।।49।।

जहाँ पे दृढ़ विश्वास हो, वही तो मन राही बहे।
कर्मन् में परिणत जानो, केवल मान्यता ही होये।।50।।

पर भावना जो है वा मूर्त, घढ़ी के सामने तुम धरो।
यह चाह तो है पर 'मैं' नहीं, जानी चाह को दृढ़ करो।।51।।

गर भावना सों तोरी प्रीत भई, जन्म सफल हो जायेगा।
विपरीत वृत्ति गर चरण पड़ी, वा रंग बदल ही जायेगा।।52।।

कर जोड़ी तुझे अब कहूँ, इक बार तो राम का नाम लो।
अपना नाम अब भूल करी, कुछ पल तो राम का नाम धरो।।53।।

स्वार्थी 'मैं' को कुछ भूले, पुरुष अर्थ गर कुछ करे।
परम अर्थ गर काज करे, शेष राम ही रह जाये।।54।।

'ज्ञान विज्ञान विवेक'
23.12.19

द्वैत और अद्वैत

पूज्य छोटे माँ
(पूर्व संकलन से)

शास्त्रों में विभिन्न विधि से आत्मा के विषय में कहा है। कहीं पर पूर्ण ब्रह्म और कहीं पर त्रै विभाजन की बात कही है। परम पूज्य माँ के सम्पर्क में आकर, दीर्घकालीन उपासना के परिणामस्वरूप इसके दर्शन होते हैं। इस रहस्य का तत्व रूप में अनुभवी ही आध्यात्मिक रसास्वादन करवा सकता है।

द्वैत और अद्वैत में भेद का प्रश्न नहीं, वहाँ तो केवल सत् की बात कही गई है। जब तक हमारी समझ शब्दों तक सीमित रहेगी, तब तक बात समझ में नहीं आयेगी। इसके विषय में परम पूज्य माँ के श्री मुखारविन्द से प्रवाह बह निकला :

'समझ समझ के समझ थकी, समझ को समझ न समझ सकी।'

जब तक समझ में दृढ़ता न आ जाये, तब तक कुछ न बनेगा; जब लौ अनुभव न हो जाये, हमारी समझ कुछ भी नहीं कर सकती। द्वैत और अद्वैत जब तक एक रूप न हो जाये, तब तक शाब्दिक ज्ञान ही रह जाता है। इस सत्यता तक मन के द्वारा ही साधना करते हुए पहुँचा जा सकता है।

मन का गुण संग करना है। चाहे वह स्थूल से संग करे अथवा सत् से संग करे, वह केवल मात्र संग ही कर सकता है। जब संग नहीं रहता तो बुद्धि प्रधान हो जाती है और वह बुद्धि जाकर सत्त्व में खो जाती है। जब 'मैं' की बुद्धि नहीं रहती, 'मैं' का मन नहीं रहता और 'मैं' का तन नहीं रहता फिर बेचारी 'मैं' के पास रहने के लिये कोई स्थान नहीं रहता।

'मैं' चाहे शास्त्र ज्ञान को अपना ले, शास्त्र ज्ञान को अपना मान भी मान ले.. परन्तु जब तक जीवन प्रमाण नहीं बनता, तब तक अद्वैत की बात समझ नहीं आ सकती। 'मैं' त्रै स्तर पर वास करती है। तन, मन और बुद्धि को उसने अपनाया हुआ है, इस कारण वह अपनी मान्यताओं का साथ देती है। दूसरी ओर त्रिपुटी की बातें करती है। 'मैं' यह कहना चाहती है कि उसका पूजन अखण्ड अजपाजाप के रूप में हो रहा है। वास्तव में 'मैं' का पूजन, बिन कहे निरन्तर चल रहा है। जब तक 'मैं' का तीनों स्तरों पर राज्य रहा, त्रिपुटी मिट नहीं पायेगी। त्रिपुटी की बात तो समझ परे की बात है, वह शब्दन् में नहीं आ सकती याद रहे :

1. जब तक हम शब्दों की बात करते हैं, तब तक हम मानते नहीं।
2. यह केवल मात्र बुद्धि का खिलवाड़ है, हम हक़ीक़त में कुछ नहीं जानते।

उपनिषदों में आता है कि सबको आत्म रूप अपना आप मान लो। यह मान कर ही वास्तविक जानना बनेगा। यह ज्ञान का कथन नहीं, अनुभव की बात है।

शब्दों में चाहे लाख कहें, वो ज्ञान विज्ञान नहीं बन सकता। वह शब्द ज्ञान ही रह जाता है, वह सत्यता भी नहीं देख सकता।

शब्दों में चाहे लाख कहें कि मैंने मान लिया है, परन्तु यह समझ कभी नहीं आयेगा। यह अनुभव गम्य है, बातों में कभी नहीं आयेगा। बिन अनुभव हम वहाँ नहीं पहुँच सकते।

अब अनुभव का प्रश्न उठता है। इसमें अपना निजी अनुभव होना चाहिये। जग में चाहे हमें लाख अनुभव मिलें, वह हमारे लिये सत्य नहीं हो सकता। यदि शब्दों में कहें कि हमने सत् स्वरूप देख लिया है, शब्दों में वर्णन करके मान लिया है, दर्शन के द्वारा जान लिया है, परन्तु फिर भी उसका अनुमान नहीं लगा सकते। जब तक हम आप वह नहीं हो जाते, तब तक अनुभव नहीं हो सकता। शब्दों में चाहे कह लें कि यह उचित है, परन्तु फिर भी हम उसे स्वयं मान नहीं पायेंगे।

वास्तव में यहाँ शब्दों का भेद नहीं, यह तो केवल मात्र स्थिति की ही बात है। इसमें विच्छेद नहीं हो सकता। जीव को आप में 'मैं' 'मैं' कहते हुए तीनों स्तरों पर अद्वैत में ही आना है। सो, सर्वप्रथम उसने द्वैत में आना है। द्वैत में आकर ही फिर अद्वैत में पहुँचेगा। जीव तो घोर तम में बैठा है। उसे तो दूसरा दिखाई ही नहीं देता, फिर वह सत् में कहाँ पहुँचेगा? तम में तो केवल एक ही होता है, उसे दूसरा भी मन वाला है यह कभी दीखता ही नहीं, वहाँ केवल वह आप ही होता है।

वह दूसरों पर जो दोषारोपण करता है, वह दोष वास्तव में उसके अपने आप में ही होते हैं। उसका अंधा मन केवल आप अपने आप में ही खोया होता है। वह तो यही समझता है कि :

1. मेरी बुद्धि श्रेष्ठ है, वहाँ दूसरी बुद्धि कहीं हो ही नहीं सकती।
2. मेरा तन ही श्रेष्ठ है, वहाँ दूसरा कोई और हो ही नहीं सकता।
3. हर पल एक ही चाहना बनी रहती है कि किसी प्रकार से 'मैं' स्थापित हो जाये।
4. ध्यान इसी भाव में निरन्तर टिका रहता है कि सब कुछ मैं आप ही हो जाऊँ।
5. मेरे तन को ही सब रिझायें, बस यही चाहना बनी रहती है।
6. मेरा ही मन बस एक मन है, सबको मेरे मन को रिझाना चाहिये।
7. मेरी बुद्धि ही श्रेष्ठ है, मैं किसी की बात नहीं मानूँगा।
8. जो मेरी बुद्धि कहेगी, मैं उसे ही श्रेष्ठ ठहराऊँगा।

यदि ऐसी मनो अवस्था है, तो हमें जान लेना चाहिये कि हम श्रेष्ठ किसे कहते हैं? हमारी बुद्धि ही सर्वश्रेष्ठ है, हम यही मानते हैं और मेरा अपना मन ही पूर्ण जग में सर्वश्रेष्ठ है। 'मैं' कहती है कि केवल मेरे ही तन को जग में स्थापित हो जाना चाहिये। यही नहीं, मैं ही भगवान हूँ, जग को पुजारी बन कर मेरी पूजा करनी चाहिये।

इस 'मैं' में ही पूर्ण जीव टिके हुए हैं, सो हमें सर्वप्रथम इसे ही देखना चाहिये।

जीव अद्वैत में केवल 'मैं' 'मैं' कहता है और 'मैं' में ही रहता है। सर्वप्रथम उसे इसे भ्रमपूर्ण सत्यता के दर्शन होने चाहियें।

1. जीव जहाँ पर जो भी देखता है, वहाँ पर केवल उसका मन ही होता है।
2. मन जो भी भाव दूसरे पर आरोपित करता है, सत्यता तो यही है कि वह आप वही है।

वास्तव में मन को दूसरे का मन तो दीखता ही नहीं, इसलिये उसे समझ कैसी आ सकती है? सब जगह पर वह अपना मन भर कर अपने आप को देख लेता है। मन केवल अपने में ही खोया हुआ है। जब तक वह द्वैत में नहीं आयेगा, तो उसे समझ कैसे आयेगी। सर्वप्रथम उसने यही समझना है कि यदि 'मैं' है तो दूसरा भी है यह भाव जागृत होना आरम्भ हो जायेगा। इस भाव के आने पर वह जीवन में व्यावहारिक सत्ता में रजो गुण में आ जाता है। तब अपनी स्थापित के साथ साथ उसे कहीं कहीं पर झुकना भी आ जाता है।

वह अब अपनी स्थापति के लिये दामन भी फैलाता है। कई बार यह भी देखा है कि वह झुक भी जाता है। यही सब करके भी वह तम में ही वास करता है, क्योंकि जो झुकावपूर्ण व्यवहार उसने जग में किया, उसके पीछे भी निहित में अपनी ही स्थापति का भाव था। इस कारण वहाँ पर भी अद्वैत ही रहा।

जब वह द्वैत में आयेगा, तो उसे यह भी दीखेगा कि यहाँ दूसरा कोई और भी है। जब अध्यात्म के द्वैत में आयेगा, तब कहेगा कि 'मैं' के अतिरिक्त बाक़ी सब राम है। जब साधक को 'मैं' न्यून दीखने लगेगी तो वह दूसरे को श्रेष्ठ कह सकेगा। जब उसे दूसरे की भी 'मैं' है, यह दीखने लगेगा, तो उसे 'तू' के दर्शन हो सकेंगे। जब साधक द्वैत में रमण करेगा तो उसे आरती लेनी आ जायेगी। फिर कभी झुक कर उसे सत् भी माँगना आ जायेगा।

याद रहे, द्वैत में आकर केवल सच्चा पूजन आरम्भ हो जाता है। ऐसे साधक का :

1. भाव श्रद्धा पूर्ण हो जाता है। वह इसी भाव में खोने लगता है कि दूसरा श्रेष्ठ है।
2. दूसरे का तन, मन और बुद्धि भी श्रेष्ठ हो सकती है, यह प्रथम बेला है जब कि उसे दीखने लगता है कि दूसरा भी श्रेष्ठ है।

इस प्रकार शनैः शनैः तन से तद्रूपता उठने लगती है और दूसरे को श्रेष्ठ मानने से वहाँ पर संग होने लगता है। इस 'मैं' ने सर्व प्रथम संग के कारण अपने आप को अपनाया हुआ था और वह उसके बिना नहीं रह सकती थी। अब वह सत् को अपना कर सत् से संग करने लगती है। 'मैं' जब तन को नहीं अपनाती तो वह सत् बुद्धि को अपनाने लगती है, शास्त्र बुद्धि में आस्था हो जाती है। जब 'मैं' मन को नहीं अपनाती तो वह राम में खो जाती है।

'मैं' निज बुद्धि को अब नहीं अपनाती, इसलिये शास्त्र बुद्धि को अपना लेती है। पहले वह 'मैं' के तद्रूप होकर रहती थी, अब वह 'मैं' से उठने लगती है और सत् पर आ जाती है। जब तन, मन और बुद्धि को अपनाने वाली 'मैं' ही नहीं रही तो उस समय द्वैत की बात नहीं रहती, वह राम की होने लगती है। फिर वह जिस इष्ट का नाम लेती है, उसी के चरणों में झुक जाती है। 'मैं' का गुण तो तदरूपता का है। पहले वह अपने तदरूप हो कर रहती थी, अब वह सत् में जा कर खो जाती है।

'मैं' जिसका भी नाम लेती थी, उसे अव्यक्त जान कर नाम लेती थी। यह जानती थी कि वहाँ पर तन, मन और बुद्धि नहीं है। प्रथम व्यक्त में पूजन और उपासना होने लगी। उसे व्यक्त मान कर वहाँ भावना को धर दिया। ज्यों ज्यों उसे अपनाया तो पता चला कि वहाँ पर तन और मन तो है ही नहीं जो वहाँ पर बुद्धि थी उसका भी कोई रूप नहीं रहा।

ज्यों ज्यों वहाँ पर जा कर मिल गया, वह मानो अव्यक्त में खो गया। जब वहाँ जा कर एकरूप हो गया तो अपना स्थूल वहाँ पर नहीं रहा। जब साधक के पास अपना तन ही नहीं रहा तो वह किसी का तन उसका है यह कैसे कह सकता है? अपना मन नहीं रहा तो किसी का मन भी कहने का प्रश्न नहीं रहा। अब उसके पास अपनी बुद्धि नहीं रही तो वह कौन सी बुद्धि को अपनाये? जब वह आप ही तन नहीं रहा, तो सब आत्मरूप हो गये।

जितने भाव उसने दूसरे पर उसे तन धारी मान कर आरोपित किये थे, उनका प्रश्न ही नहीं रहा। जब अपना तन ही अपना नहीं रहा तो वह किसी को क्या कह सकता है। इसके लिये पूर्ण संसार अपना आप हो गया। अब सब में वह अपने ही दर्शन करता है। अब उसके पास न तो अपने तन, मन और बुद्धि रहे, न दूजा रहा और न आप ही रहा।

अब उसे केवल मात्र आत्मरूप ही दर्शाता है। वहाँ तो दर्शन की बात ही नहीं। यह तो शब्दों में कहता है। अब वह सब कुछ देख कर भी कुछ नहीं देखता। वहाँ रचना है, पर देखने में कुछ नहीं, यह अनुभव की बात है। यदि अनुभव है तो फिर शब्द का प्रश्न नहीं। वह अद्वैत में ऐसा खोया कि पूर्ण

आप ही हो गया। अब वहाँ पर अद्वैत नामक भी कोई शब्द नहीं। वहाँ पर तो केवल सत्यता है। जब सब सत् हो जाता है तो वहाँ पर केवल आप ही रह जाता है।

अद्वैत में केवल 'मैं' दीखती है, परन्तु वह 'मैं' पूर्ण की मैं होती है, वहाँ पर व्यष्टि मैं नहीं होती, वह समष्टि मैं हो जाती है। तम में केवल 'मैं' ही दीखती है, परन्तु वह व्यक्तिगत होती है। वहाँ पर समष्टि का दर्शन नहीं, वहाँ केवल एक संग ही होता है।

दोनों में बहुत भेद है। जब वह सब आप ही हो जाता है तब समझ सकता है। यह समझ द्वैत की राह से आ सकती है। वहाँ पर वास्तव में समझ की भी कोई बात नहीं होती, वह आप ही हो कर देखा जा सकता है। केवल अद्वैत में रमण करने से अथवा ज्ञान की राह से पता नहीं लग सकता। वह तो वही हुआ जा सकता है। वहाँ पर मन की कोई बात नहीं होती। मन बदल कर वहाँ बस जाता है, ऐसी कोई बात नहीं होती। सो वहाँ मनोस्थिति अथवा कर्मों की स्थिति की बात नहीं होती। न वहाँ कर्म गति की बात होती है और न ही शब्दों की बात होती है।

जब वहाँ पर मन ही नहीं तो कौन सी स्थिति की बात कह सकते हैं ? जहाँ पर कोई बुद्धि नहीं तो कौन सी बुद्धि की स्थिति की बात कही जा सकती है ? इसी प्रकार वहाँ कोई तन ही नहीं तो कौन से तन की स्थिति की बात की जाये ? वास्तव में उसके कोण से किसी स्थिति की बात का प्रश्न ही नहीं उठता।

या तो उसके पूर्ण तन है या उसका कोई तन नहीं। या हर शास्त्र उसके है या उसका कोई नहीं। या हर मन उसका है या कोई मन नहीं। वह दूजा किसो कहे, वह तो वहाँ पर आप ही नहीं। जो कोई देखने वाला देखता है, वह अपने दृष्टिकोण से देखता है। उसके कोण की क्या कहें, उसने तो देख कर भी कुछ नहीं देखा। वह 'पूर्ण की पूर्णता' में खो जाता है।

आज दीर्घकाल के दिव्य सम्पर्क का प्रसाद पाकर कह सकते हैं कि राम जी की कृपा से परम पूज्य माँ के मुखारविन्द से प्रवाहित 'उर्वशी', प्रवाह की दृष्टि से पल पल पर परम पूज्य माँ के जीवन राही यह दिव्य दर्शन हो रहे हैं और इसके द्वारा पावनी प्रवाह का प्रमाण सहित रसास्वादन का सौभाग्य हमं अहर्निश मिल रहा है। यह दर्शन पाकर प्रत्यक्ष अनुभव हो रहा है, 'हम ऐसो, तुम ऐसे प्रभु जी।'

परम पूज्य माँ के श्री मुखारविन्द से प्रायः सुनते हैं कि जिन्दगी और कुछ भी नहीं, तेरी मेरी कहानी है। एक ओर अखण्ड सत् का प्रमाण और दूजी ओर जीवत्व भाव का रूप पल पल पर दीख रहा है। एक ओर अखण्ड सत् का प्रमाण और दूजी ओर जीवत्व भाव का रूप है। इस कृपा प्रसाद के दर्शन पाकर मन कृत् कृत् हो रहा है।

..अनेकों नाम और रूप नद,
पर्वत शिखर पे धारे है!

गतांक से आगे ...

अत: समुद्रा गिरयश्च सर्वेऽस्मात्स्यन्दन्ते सिन्धव: सर्वरूपा: ।
अतश्च सर्वा ओषधयो रसश्च येनैष भूतैस्तिष्ठते ह्यन्तरात्मा ।।

मुण्डकोपनिषद् - 2/1/9

शब्दार्थ:

इसी से समस्त समुद्र और पर्वत उत्पन्न हुए हैं, इसी से प्रकट हो कर अनेक रूपों-वाली नदियाँ बहती हैं; तथा इसी से सम्पूर्ण औषधियाँ और रस उत्पन्न हुए हैं जिस रस से पुष्ट हुए शरीरों में ही यह सबका अन्तरात्मा परमेश्वर सब प्राणियों की आत्मा के सहित उन उनके हृदय में स्थित है ।

तत्व विस्तार:

अखिल उसी सों जन्मे हैं, अखिल रूप वह ही धरे ।
नाम रूप और परम में, भेद नहीं वह जान ले ।।1 ।।

स्थूल उत्पत्ति सम्पूर्ण, परम सों ही बताते हैं।
सूक्ष्म रूप उसी का कही, अब बाह्य रूप बताते हैं।।2।।

समस्त पर्वत महागिरी, अखण्ड एको धारे है।
अनेकों नाम और रूप नद, पर्वत शिखर पे धारे है।।3।।

चहुँ ओर यह बह निकले, ऊसर भूमि में प्राण भरे।
अनेक बीज वहाँ फूट पड़ें, औषध भये वा रस भरे।।4।।

भूत मात्र वा भक्षण सों, पुष्टित रे हो जाते हैं।
वीर्य बल पूर्ण तन, औषध अन्न सों पाते हैं।।5।।

हर ही अन्तरात्म में, परम आप ही रहते हैं।
पुष्टित तन में रे कहें, राम आप ही रहते हैं।।6।।

जड़ जंगम रे जो भी है, राम कहें रे वह ही है।
सर्ववासी सर्वरूपा, एक तत्व रे वह ही है।।7।।

चहुँ दिशा विस्तृत ब्रह्माण्ड, नद नाले रस प्रवाह है जो।
बनस्पत रोम की उत्पत्ति, वा सों वा में ही रे हो।।8।।

भूमि वह पर्वत वह, जलधारा भी वह ही है।
सागर बदली वर्षा बुन्दिया, भी जानो रे वह ही है।।9।।

सर्व नियन्ता ईषण कर्ता, सर्व रचयिता वह ही है।
सर्वोपरि अनुमन्ता, सर्वरूपा भी वह ही है।।10।।

अखण्ड रस एक सत्त्व, पूर्ण एको वह ही है।
सर्वरूप रे विश्वरूप, परिपूर्ण बस वह ही है।।11।।

विश्वात्मना सर्वात्मना, परमात्मना रे वह ही है।
अखिल रूप पुरुषोत्तमा, परम पुरुष रे वह ही है।।12।।

जगदेश्वरा परमेश्वरा, विश्वपति रे वह ही है।
वह विश्वरूप वह अखिल रूप, अखिल पति रे वह ही है।।13।।

रक्त रस और मास पुंज, जल अन्न पुष्टित वह करे।
प्राणी बनी आधार वह, पुंज आन्तर में रे रहे।।14।।

अन्नमय कोष बना, कहा उसी सों उसका है।
प्राण मनो विज्ञान भये, कोष रूप भी उसका है।।15।।

अपना देश बनाये वह, ज्यों चाहे रुचि आये वह।
हर नाम रूप बस वह ही है, रचना में छिप जाये वह।।16।।

मोह संग चाह अहम्, आवृत नयन न देख सकें।
अज्ञान मनी विपरीत मति, सत्य सार न देख सकें।।17।।

स्थूल रूप महा विश्वरूप, यह तनो रूप रे वह ही है।
उत्पत्ति यह बाह्य रूप, अन्य रूप रे वह ही है।।18।।

पृथ्वी लोक यह महाभूत, विराट रूप भी वह ही है।
अनेक रूप यह उत्पत्ति, नयन रूप भी वह ही है।।19।।

स्थूल जग जो देखे है, तम का ही विस्तार है।
सूक्ष्म सों यह प्रदुर हुआ, सूक्ष्म ही आधार है।।20।।

स्थिति मन में होती है, आन्तर लोक रे यह ही है।
स्वभाव लोक यह प्राण लोक, अरे मनो लोक रे यह ही है।।21।।

रजो लोक हिरण्यगर्भ, तैजस भी रे यह ही है।
महाभूत की तन्मात्रा, ध्यान लोक भी यह ही है।।22।।

भाव लोक इसे कहो, प्रवाहित बाह्य रे हो जायें।
सूक्ष्म से ही भाव बनी, स्थूल प्रवाहित हो जायें।।23।।

उसका भी कारण रे है, वह कारण रे और है।
हृदय गुहा में साधक, तू पाये वह ठौर है।।24।।

लय अवस्था वह ही है, सर्वज्ञ सर्वोपरि है वह।
अधिदेव वही अधिभूत वही, जानो अधियज्ञ है वह।।25।।

कर्माशय भी उसे कहें, मौन हृदय भी कहते हैं।
द्यू लोक भी उसे कहें, कर्माशय भी कहते हैं।।26।।

प्रज्ञा चाहे तुम कह लो, ईश्वर भी तुम उसे कहो।
भाव रहित समाधि हो, तो ही उसको जान सको।।27।।

समष्टि व्यष्टि कर्म बीज, वहीं पे तो रे रहते हैं।
बाह्य रूप वह सगरे धरे, यह ही तो रे कहते हैं। ।28।।

आनन्दमय रे इसे कहें, प्रज्ञा हृदय रे कहते हैं।
लो पुनः कहें सुषुप्ति भी, कर्माशय की कहते हैं। ।29।।

स्थूल रूप जो दीखे, कारण में जा लय होये।
उत्पत्ति स्थिति भी वह, नाम रूप तजी लय होये। ।30।।

रूप स्थूल को तुम कह लो, नाम सूक्ष्म को कहो।
नामी जिससे प्रदुर भये, वह तो इनसों दूर कहो। ।31।।

वह सत्त्व कोई और है, कारण तक यह ले जाये।
जो करे जग धारणा, उस तक तो वह ले आये। ।32।।

उत्पत्ति स्थिति लय की, बतियाँ देख वह कहते हैं।
परम कर्ता वह ही है, बार बार यह कहते हैं। ।33।।

हृदय तलक तो चले आओ, हृदय में उसका वास है।
जग कारण जो सत्त्व है, उसका वहाँ निवास है। ।34।।

धीरे धीरे साधक को, परम की ओर ले जाये है।
महा कारण वह जान ले, कारण जान जो पाये है। ।35।।

मौन में जाये जो स्थित होये, महा मौन तो जान ले।
हृदय से भी जब उठ जाये, अरे मेरे राम को जान ले। ।36।।

वह काल बधित लय है कालातीत, वह गुणातीत लय है गुण बधित।
वह कर्मातीत लय है कर्म बधित, वह भावातीत लय है भाव बधित। ।37।।

वह महामौन भाव पुनः, नहीं वहाँ से उठ सकें।
मौन अवस्था में जानो, भाव रहित किस विध रहें। ।38।।

वह कर्मातीत निर् कर्म बीज, पुन: क्योंकर क्या प्रकटे।
कर्माशय में जाये के, समझ सके क्यों क्या प्रकटे। ।39।।

मिथ्यात्व उत्पत्ति जानी, सूक्ष्म को भी जान ले।
मिथ्या दर्शन कारण जो, उसको भी अब जान ले। ।40।।

परम का अनुभव होने लगे, सत्त्व में जब आ जाये ।
समीपस्थ निज को पाये, समाधि में जो समा जाये । ।41 । ।

इस कारण मन जान ले, हृदय की ओर ले जाते हैं ।
साधक जन रे जान ले, वहीं तलक जा पाते हैं । ।42 । ।

बुद्धि परम न मिला सके, मनो बुहारी देती है ।
विपरीत भावना गर उठे, चेतावन कर देती है । ।43 । ।

निर्णयात्मिका यह रे कहें, साधक मन को समझाये ।
तब लग ही यह संग रहे, सत्त्व तलक पहुँच जाये । ।44 । ।

सत्त्व में बुद्धि नहीं रहे, समाधि स्थित रे हो गये ।
रज में ही बुद्धि यह है, सत्त्व परे रे हो गये । ।45 । ।

वहाँ प्रज्ञा जागृत होये, सत्त्व में समा जाये ।
स्थूल सूक्ष्म त्यज करी, कारण में जब आ जाये । ।46 । ।

सत्त्व में जब रे आ पहुँचे, फिर राम वरे तो ही वह मिले ।
अपने बस की बात नहीं, जो राम करे वह ही रे होये । ।47 । ।

कहने को रे देख कहें, बुद्धि निर्णय करती है ।
याद रहे रेखा अनुकूल, ही निर्णय वह करती है । ।48 । ।

अपने बस में कुछ नहीं, निश्चित राहें तन की हैं ।
बार बार यह कहते हैं, रेखित प्रवाहें तन की हैं । ।49 । ।

हृदय में जो देख ले, अहम् रहित वहाँ जाये सके ।
मन रहित बुद्धि रहित, तन रहित वहाँ जाये सके । ।50 । ।

हृदय में उसका वास है, बार बार यह कहते हैं ।
कारण में तू जा पहुँचे, इस कारण ही कहते हैं । ।51 । ।

17-9-61

आपने जन्म लेकर,

हमारे तद्रूप हो कर के हमें हमीं से उठाया है!

श्रीमती पम्मी महता

सरलता के बिना कोई भी व्यक्ति अन्य व्यक्तियों का सच्चा स्नेह नहीं पा सकता..

अपने स्व का मान और प्रभु के प्रति प्रेम भाव होने से दूसरों को आदर देना सहज हो जाता है।

श्री हरि जगद्जननी माँ ने सच ही कहा है, 'प्रेम भाव में किया गया काज सहज सफलता देता है।' आप कहते हैं, 'प्रेम की कोई सीमा नहीं होती!' ठीक फरमाया आप प्रभु माँ ने.. सभी के प्रति समान स्नेह रखने से ही हम धैर्य का जीवन जी सकते हैं!

आप माँ कहते हैं कि भाव सच्चा हो तभी आप माँ की करुण कृपा प्रवाहित हो कर हृदय को पावन कर देती है.. आयें, इसे पूज्य भाव से धारण करते हुए आपके श्री चरणन् में हम सभी आपके इस आदेश को अतीव विनम्र भाव से ग्रहण कर लें जीवन में.. हे माँ, हमें आशीर्वाद दें कि इस परम सत्य में हम जी पायें! हरि ॐ

हे श्री हरि नाथ, असीम अदब व प्रेम से आपकी वाणी को उठा पायें, एक जिज्ञासु की तरह! पूरी लग्न व आपमें मग्न हुये अतीव प्रेम से चलते चलें उस रहगुज़र पर, जो आप श्री हरि माँ ने अपने क़दमों से बनाई है। हे करुणाकर माँ प्रभु जी, अपने में ही स्थित होने दीजिये.. आन्तर बाहर हम एक से हों, जिससे आंतर शुचि पावन हो जाये और करम आपके से, हम सच्चा व सुच्चा जीवन जी पायें! हे माँ, आप ही का यूँ कृपा प्रसाद मिलता रहे!

आज हम कहाँ से कहाँ पहुँच गये हैं ..
कितने झमेले आंतर में पनप गये हैं..

अंधी आँखें अपना ही सत्य नहीं देख पातीं.. जिस अहंकार को धराशायी होना था, वही चोटी पर चढ़ कर नित नये अपराध करता है.. और उसी का गुमान करते हुये स्वयं को अपनी व भगवान की नज़रों में किस क़दर गिरा लेता है। हमें परम सत्य के आगे सीस झुका कर अतीव विनम्र भाव से, इससे स्वयं को उठा लेना चाहिये क्योंकि आपने जन्म लेकर, हमारे तद्रूप हो कर के हमें हमीं से उठाया है!

उस अहैतुकी कृपा को क्या नाम दूँ, यह तो सच ही हमारे जीवन को आपका वरदान भी है और आपका आशीर्वाद भी.. कैसे भूल सकते हैं उस अनमोल निधि को व आप कृपालु दयालु माँ को.. हम तो आपका धन्यवाद करी करी कर ही नहीं पाते; फिर भी शुक्र शुक्र करते हुये शुक्रिया अदा करते रहते हैं!

भगवद् कृपा किस क़दर कृपा पूर्ण होकर बरसी है हम सभी पर.. हे नाथ, आप ही से सनाथ हुये हुये हैं हम.. फिर आप ही बताईये, इस सभी को पाने के बाद और क्या माँगें हम? जिन्होंने अपने समेत अपना सर्वस्व ही लुटा दिया हम पर, वही हमें माटीवत् जीने को प्रेरित करते चले! आमीन।

यही तो वास्तव में जीना होगा! आपका नाम जो सबसे ऊँचा है, वही आंतर बाहर स्थापित हो.. अब तो जीवन के पल ही कितने बचे हैं हम सभी के पास, इसलिये इस ईश्वरीय देन को जीवन में पूर्णतया ढाल लें। हरि ॐ

युगों युगों से आप हमारे लिये चलते चले आ रहे हैं.. फिर भी हम पाप कुमाने से नहीं डरते। हमें इस परम सत्य का एहसास क्यों नहीं होता कि हम कितने ग़लत हैं.. अपने आपसे बाहर निकलकर आपको देखें तो सही, कितने आनन्दित हो उठेंगे हम। आंतर की दुष्ट वृत्तियों से निजात मिल जायेगी.. दैवी सम्पदा की धरोहर को पा कर ख़र्च करते हुये हम कितने धनवान हो जायेंगे।

आप माँ से जो मिली है यह दौलत, सब से ऊँची भी है और जीवन की सच्ची कुमाई भी। इसी आरत भाव को हे श्री हरि नाथ, इतना आरत कर दीजिये कि और कुछ याद ही नहीं रहे। आमीन

जीवन मिला है तो गुज़र तो जायेगा ही, मगर क्या इस दौलत का मान रख पायेंगे हम ? अपने आप से यह प्रश्न पूछना चाहिये हमें !

आज हम सभी आपके जन्म दिवस पर इकट्ठे हो गये हैं। यह इत्तफ़ाक़ नहीं, यह तो आपकी प्यारी प्यारी हमारे हृदयों पर दस्तक है.. उठो और जाग जाओ, 'जो दीपक मैंने आप सभी के लिये प्रज्जवलित किया है उसकी रौशनाई में जाग जाओ.. भरम के सारे पर्दे उठने दो.. स्वार्थ भाव को निःस्वार्थता में आने दो.. स्व के भाव को उभरने न दो, यह केवल दुःख ही दुःख देता है। जन्मों जन्मों

से इसी भाव में गुमराह हुये क्यों बैठे हो, उठो जागो और चलो! इस आंतर की कालिमा को धुलने दो सत्यार्थ प्रकाश को आने दो!'

क्या भगवान जी का सन्देश हमें सुनाई नहीं देता ? देता है तो फिर उसे अनसुना क्यों कर रहे हैं हम ?

क्या हम उस प्यार की आभा व सौंदर्य में डूबे रहने की तमन्ना को छिन्न भिन्न कर देंगे.. कितने आहत हो चुके हैं माँ, हम अपने ही मलिन भावों से।

हमें तो बहुत ही परम सौभाग्य दिया है आपने, हमें चुन कर..

अपने संग जोड़ कर..

कृतज्ञ हैं हम व अपना आभार व्यक्त करते हुये यही दुआ करते हैं कि हम सभी कुछ भूल भाल कर आप ही में जा विलीन हो जायें! जो आप ही आप हैं, केवल आप ही रह जायें !

हरि ॐ ततसत् परब्रह्म परमेश्वर तू- तू ही तू इक तू ही तू। हरि ॐ

❖ ❖ ❖

आन्तर दर्शन

जब कभी मैं हारी, मैं अपने आपसे ही हारी हूँ..

श्रीमती शान्ता देवी
(पूर्व संकलन से)

इससे पूर्व अंक में मैंने सत्याभिव्यक्ति करते हुए यह बताया था कि मुझे परम पावनी पूज्य माँ के आश्रय तले सर छुपाने के लिये, परम पिता परमात्मा की अहैतुकी कृपा से इस आश्रम में शरण ग्रहण का परम सौभाग्य तो प्राप्त हो गया, पर चित्त में पड़े जन्म जन्म के अपने मलपूर्ण संस्कारों से मैं पूर्णतया ग्रसित थी..

गतांक से आगे...

आध्यात्मिकता, शिष्टाचार व उन्नत आचार विचारों के मूर्त रूप अर्पणा के संस्थापक, परम पूज्य माँ अद्वैत की सजीव प्रतिमा हैं। आज से कई वर्ष पूर्व उनका शुभ्र धवल परिधान में लिपटे रूप व स्वरूप का प्रथम दर्शन करते ही, मेरा माथा उनके श्री चरणों में झुक गया था। उनकी झलक पाते ही सहसा मन में ये भाव उद्वेलित होने लगे कि **:**

1. क्या कभी वर्षों पूर्व की मेरी साध ऐसे महान् व्यक्तित्व के चरणों में रहने से पूरी हो सकेगी**..**
2. क्या वर्षों से उठी हुई कामना अनुरूप मैं जीवन में सही मार्गदर्शन प्राप्त कर सकूँगी..
3. क्या कभी मैं ऐसी महिमामयी माँ के चरणों में अर्पित हो सकूँगी..

4. क्या मेरा भावी जीवन सही अर्थों में राम नाम रस का पान कर सकेगा..

ऐसे भावों के संकल्प विकल्प में उलझा मेरा भी मन 'अर्पणा' में आश्रय पाने के लिये विवह्ल हो उठा। कहावत है कि 'जहाँ चाह वहाँ राह'।

ऐसी ही चाह लिये मुझे एक दिन अर्पणा आश्रम पहुँचने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस अन्तराल में मुझे नियमित रूप से अर्पणा पुष्पांजलि पढ़ने का भी सुअवसर मिलता रहा।

अर्पणा के नैसर्गिक सौन्दर्य में निर्मित भव्य मन्दिर व वहाँ पर प्रतिष्ठित भगवान जी के मनोहर स्वरूपों का दर्शन करते हुए जहाँ मैं मन ही मन भगवान जी का धन्यवाद कर रही थी, वहीं पर यह अफसोस भी होने लगा कि मैं इतने वर्ष इस पवित्र धाम से वंचित क्यों रही..

अर्पणा के पावन स्थल पर आकर सद्गुरु रूपा परम पूज्य माँ व पूज्य छोटे माँ का संरक्षण पाकर, मुझे प्रातः सायं उनके ज्ञान विज्ञान से सनिग्ध सत्संगों का अमृत रस पान करने का सौभाग्य मिला। आदरणीय पापा जी जैसे संतों का समागम पाकर मैं न केवल अपने भाग्य को मन ही मन सराहा करती थी, बल्कि आन्तर में स्वयं पर गुमान भी निहित हो गया कि आज मैं कितनी बड़भागी हूँ.. पर कभी यह सोचने का प्रयास ही नहीं किया कि :

'मैं कौन हूँ ? मेरे जीवन का प्रयोजन क्या है और भगवान जी ने मुझे इस सुन्दर जग में क्यों भेजा है ?'

इस यथार्थता को जानने की ओर तो मैंने अपना मुख ही नहीं किया और अपने मन की शान्ति के लिये यहाँ उपलब्ध सुख साधनों को प्राप्त कर जीवन-यापन करना ही मैंने अपना लक्ष्य समझ लिया।

यह तो परम पिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा थी कि उन्होंने मुझे बाह्य जग के दलदल से निकाल कर एक ऐसे परम श्रेष्ठ सद्गुरु की शरण प्रदान की, जिनका स्वयं का जीवन शास्त्रों की प्रतिमा है और जो वेदान्त का मूर्त रूप ही हैं।

मेरी अंधी आँखों को यहाँ आकर ही रोशनी मिली। यहाँ विभिन्न धर्म, जाति, वर्ण व आयु के लोग मिलकर एक ही परिवार सम रहते हैं। देश-विदेश से आये साधक, एकत्व भाव लिये एक ही समाज का रूप धारण किये हुए हैं।

भारतीय संस्कृति व सभ्यता के मूल स्रोत वेद, उपनिषद् व गीता ज्ञान को ही यहाँ की जीवनधारा का मूल रस माना है। एक आध्यात्मिक व आदर्शमयी बस्ती के रूप में मुझे यहाँ एक ऐसी नई दुनिया मिली, जिसका दृष्टिकोण ही विलक्षण है।

शिक्षा काल में भी मेरे मन में एक प्रश्न उठता था कि वो लोग कैसे होते हैं जो वेदों व उपनिषदों का अध्ययन करते होंगे ?

अर्पणा में सत्संग श्रवण का मुझे मौका मिला, यहीं पर सर्वप्रथम मुझे हाथ में उपनिषद् पकड़ने का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह इस मन्दिर का ही प्रताप है कि परम पूज्य माँ का संग पाने की मेरी मनोकामना, आश्रम में जीवन बिताने की चाह एवं गीता व उपनिषदों को पढ़ने की तमन्ना, सब एक साथ पूर्ण होते नज़र आ रहे थे।

परन्तु कमी कहाँ रह गई.. वह थी अपनी लग्न, दृढ़ इच्छा-शक्ति, एकाग्रचित्त विश्वास व अनन्य भक्ति व प्रेम की।

परम पूज्य माँ का हर वाक् ब्रह्म वाक् है, जो हमें उत्तरायण पथ की ओर जाने के लिये प्रेरित करता है.. लक्ष्यहीन हम जीवों को निश्चित पथ सुझाता है। मानवीय गुणों का अद्भुत सम्मिश्रण उनके जीवन प्रमाण में अहर्निश प्राप्त हो रहा है। उनकी उदारता, महानता व विशालता का अनुभव यहाँ रहने वाला हर साधक और उनके निकट सम्पर्क में आने वाला हर व्यक्ति, वह चाहे बच्चा हो या बूढ़ा, स्त्री हो या पुरुष, निर्धन हो या अमीर- अपने आन्तर में करता है।

अर्पणा अध्यात्म का घर है। ईश्वर यहाँ कण कण में व्याप्त नज़र आते हैं। यहाँ का पत्ता पत्ता प्रकृति व सर्वशक्तिमान की दिव्यता का दर्शन कराता है। यहाँ का कण-कण परम पावनी, तपस्विनी, परम पूज्य माँ के श्री चरणों की धुलि से युक्त हैं।

सच तो यह है कि अर्पणा किसी एक व्यक्ति विशेष की धरोहर नहीं है, यह समष्टि का घर है, जहाँ हर कर्म पूजा भाव से होता है। यहाँ साधकों की प्रेरणा प्रद परम पूज्य माँ हैं, जिन्होंने हर पल उनकी करुणा को अपने स्वयं के जीवन में प्रवाहित होते देखा है।

जो सुख साधन हम सबको उनकी समष्टि करुणा के फलस्वरूप मिले हैं, वे उनकी असीम करुणा का ही प्रसाद है। उसमें हमारा कुछ भी तो नहीं है, यह एक अखण्ड सत्य है! हम परम पूज्य माँ के शब्दों का आसरा लेकर यही कह सकते हैं :

तोरी कृपा हुई है अपार, तेरा अन्त मैं जानूँ न।
तू बेअन्त दयालु पिता, तेरी दया का सागर जानूँ न।।

(अर्पणा भजनावली)

आज मेरे जैसा भाग्यवान कौन होगा.. मैं यही कहना चाहती हूँ, 'हे भगवन! आपने इतना दिया, इतना दिया कि मेरा तन, मन, बुद्धि सब आपके चरणो में विनीत भावों से झुकता ही जा रहा है। तूने तो मुझे दिया ही दिया है। जब कभी मैं हारी, मैं अपने आपसे ही हारी हूँ। अपनी 'मैं' व 'अहं' से हारी हूँ। तूने तो अपनी कृपा प्रसाद बख्शने में कोई कमी नहीं छोड़ी। मैंने स्वयं तो कुछ किया ही नहीं, बस पाया ही पाया है।'

सच तो यह है कि मैंने अपने जीवन के कुछ वर्ष नैराश्य भाव में ही व्यतीत कर दीये जिसके फलस्वरूप मैं कर्महीन हो गई थी। अन्य किसी भी स्थान पर मुझे निष्कासित कर दिया है।

यह तो मेरे परम सद्गुरु की ही करुणा है कि उन्होंने मेरी कमियों के बावजूद भी मुझे अपनी शरण दी, मेरा आश्रय बनाये रखा और मौन ही मौन में फिर से जीने की प्रेरणा दी.. उन्होंने ही मुझे जीवन की सत्यता का राज़ सुझाया।

मुझे अपनी ही चित्तवृत्तियों को दृष्टा भाव से देखने की ओर प्रेरित किया। प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष में उन्होंने अपना करुणापूर्ण हाथ मुझ अपात्र पर बनाये रखा.. यह क्या मेरे लिये कम है ? ऐसी पावन स्थली का गुणगान मैं किन शब्दों में करूँ, समझ ही नहीं आता!

हम लोग, जो भी यहाँ आये, अपने आन्तर में राग द्वेष, ईर्ष्या, संग, मोह, लोभ व अहम् के भावों से भरे हुए थे। पूज्य माँ ने हमारी कुपात्रता की ओर ध्यान न करते हुए हमें गले लगाया। हमें सुखी करने के लिये वह सब कुछ किया जो आज के युग की माँग है। स्वयं पृष्टभूमि में रहकर, मौन ही मौन में अपना प्रेम उंडेल कर हमें सुखी व प्रसन्न किया।

उनके प्रेममय व्यवहार से मेरी निराशा जाती रही और उनकी करुणापूर्ण दृष्टि से मुझे जीने का राज़ समझ आने लगा। किसी कवि का यह गीत याद हो आया :

'जीने का राज़ मैंने, मुहब्बत में पा लिया।'

❖ ❖ ❖

आश्चर्यवत् पश्यति..

लक्ष्य ही नहीं, पथ भी महत्त्वपूर्ण है!

डॉ. जे. के. महता

(पूर्व संकलन से)

आज हम माँ को शास्त्र की सजीव सप्राण प्रतिमा कहते हैं और उन्हें परम पूज्य मानते हैं। परम पूज्य माँ के जीवन को देख कर हमें शास्त्र के अर्थ स्पष्ट होते हैं। ये शब्द तो मैंने पूज्य माँ को पाँच साल बहुत नज़दीकी से दर्शन पाने के पश्चात्, उन को शास्त्र की तुला में तोलते हुए 2 अक्तूबर, 1962 में कहे थे।

तब से लेकर आज तलक मुझे निरन्तर परम पूज्य माँ के साथ रहने का सौभाग्य मिल रहा है। उन के द्वारा शास्त्र का सच्चा ज्ञान भी मिल रहा है और जीवन के हर पल में उन्हें देखने का मौका मिल रहा है। आज मैं जानता हूँ कि मैं माँ को परम पूज्य मानता हूँ पर जानता नहीं कि यह कौन हैं और शास्त्रों की प्रतिमा कैसे हैं? यह सत्य है कि 43 साल पहले, जब मैं माँ को प्रथम बार मिला था, माँ तब भी वही थे, जो वह आज हैं।

पूज्य माँ के साथ पहले पाँच साल का मेरा अनुभव यह था कि यह मेरे सुहृदय, परम विश्वसनीय मित्र हैं और मेरे कुल में सभी सदस्यों का भी यही अनुभव था। इन के विचित्र प्रेम ने हमारे किसी भी अवगुण पर कभी भी चित्त नहीं धरा.. और बाद में यही प्रमाण हमें उन के चरणों में खेंच लाया। मैं भगवान के यही गुण समझता था और शास्त्रों के वाक् का भी यही अर्थ समझता था, इस कारण अपनी तरफ से मैं इन्हें भगवान घोषित कर के आया था। मेरी इस मान्यता पर माँ पूरे उतरे।

तत्पश्चात् मैं भी अपना काम काज, घर-बार छोड़ कर सपरिवार माँ के पास आ गया। इनके पास आने के बाद जग में अनेकों विपरीततायें और कष्ट क्लेश आये, पर वे हमें छू भी न सके। इनके प्रेम की छत्रछाया के संरक्षण में हम यहाँ महा सुखी रहे। मेरे जैसे अन्य संसारी लोग भी माँ से आ मिले। उन में कई तो द्वेष भरे, माँ से शत्रुता का व्यवहार करते थे। उन्होंने जग में इन्हें क्षति पहुँचाने, बदनाम करने और तबाह करने में कोई कमी नहीं रखी। इन सब के साथ माँ का समभाव से प्रेम, करुणा, क्षमा का प्रवाह रहता और सब के तदरूप हो कर जिसके लिये जो भी करना होता, उस कर्म का प्रवाह वह करते। यह देख कर मेरा मन गदगद होने लगा।

उन के दैवी गुणों के प्रत्यक्ष प्रमाण को देख कर मैं माँ को एक सच्चा संत मानने लगा। माँ ने भी हम सब आश्रमवासियों को अपना एक हिस्सा बना कर इनसानियत के गुण हम में भरे, जिससे हम को अपने जीवन में सुख और पूर्ति का अहसास होने लगा और अर्पणा की निष्काम सेवा की नित्य विस्तार को प्राप्त हो रही कर्म प्रणाली का शुभ आरम्भ हुआ।

इस के अतिरिक्त पूज्य माँ के मुखारविन्द से बहे हुए शास्त्रों के दिव्य ज्ञान और हम लोगों के प्रश्न पूछने पर प्रज्ञा प्रवाह रूपा उन के उत्तर सुनने और मनन करने का हमें सौभाग्य प्राप्त हो रहा है।

उन के मुखारविन्द से प्रज्ञा प्रवाह रूपा शास्त्रों का ज्ञान और उस का उन के जीवन में दर्शन हो रहा है। आज हम सब तोल तोल कर इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि पूज्य माँ शास्त्रों की सजीव प्रतिमा हैं और आज यह भी जानते हैं कि उन का न ही इस ज्ञान के साथ और न ही अपने तन के राही बह रहे दैवी गुणों के साथ कोई संग है और न ही कोई अहम् भाव है। हम तो इन को परम की प्रतिमा मानते हैं।

उपरोक्त सत्य को जान कर और मान कर, पूज्य माँ में गुरु भाव रखते हुए जब भी हम ने पूज्य माँ से नाम की दीक्षा माँगी, उन्होंने कभी भी न किसी को नाम दिया और न ही कभी गुरु के पद पर आसीन हुए!

हम जैसे भी हैं, पूज्य माँ एक एक के साथ तदरूप हो कर उसे स्वीकार करते हुए उसको कल्याण और उन्नति के पथ पर ले जा रहे हैं। वह धीरे धीरे अपने आप को उतना उतना हमारे आन्तर में प्रकट कर रहे हैं, जितनी जितनी हमारी ग्रहण करने की योग्यता है । हक़ीक़त में माँ कौन है, हम में से कोई नहीं जानता ।

शास्त्र कहते हैं कि परम तत्व, इन्द्रिय, मन और बुद्धि के द्वारा ग्रहण में आने वाला कोई विषय नहीं है । यह न ही शास्त्रों के ज्ञान, दान, तप और यज्ञ रूपा कर्मों द्वारा जाना जा सकता है, न ही ध्यान और चिन्तन से! शास्त्र यह भी कहते हैं कि वह हमारे आन्तर में प्रतिष्ठित है, फिर भी हम उसे जान नहीं पाते । शास्त्र यह भी कहते हैं कि वह हो कर ही उसे पाया जाता है । जैसे चिता को जलाने वाली लकड़ी अन्त में चिता में ही डाल दी जाती है, उसी प्रकार उसे पाने वाला उसी में खो जाता है । यह ज्ञान तो मैं हमेशा से ही लोगों को सुनाता आया हूँ, पर स्वयं आन्तर में परम के पथ पर चलने के लिये एक क़दम भी न उठा सका ।

परम पूज्य माँ के मुखारविन्द से मैंने पहली बार सुना, 'स्वरूप की माँग माँग नहीं, आवरण मिटाव ही साधना है' । बरसों से माँ की अध्यक्षता में निष्काम कर्म का अभ्यास करने के बाद मन में एक प्रश्न उठा कि यह आवरण क्या हैं, इसे देख तो लूँ और यह कैसे मिटता है?

तब से लेकर आज तलक परम पूज्य माँ इसी अज्ञान आवरण को ही दर्शा रहे हैं । तनो संग और अहंकार ही इस का कारण है, अहंकार मिटाव ही पावनकर साधना का पथ है । भगवान की देन, यह संसार जो साधक को मिला है, इस अहंकार के मिटाव अर्थ ही है.. भगवान की हम पर यह अतीव करुणा ही तो है ।

पूज्य माँ ने अपने आरम्भ के साधना काल के पाँच सालों में हमारे साथ रह कर, हमारे लिए इस अहंकार मिटाव के पथ का निर्माण किया । माँ में तो अहं था ही नहीं तो इस का मिटाव कैसा? परन्तु अहंकार से आवृत हम जैसों के साथ रह कर हमारे जीवन में यह अहंकार कैसे मिटता है, इस के पद चिन्ह हमारे लिये छोड़े । तत्पश्चात् पूज्य माँ 43 बरस से मुझे पावनता की राह दिखला रहे हैं । आज वह यहाँ तक ले कर आये हैं कि वो पद चिन्ह आज मेरे जीवन के पथ-प्रदर्शक बन गये हैं ।

आज मैं माँ को सद्‌गुरु के रूप में जान रहा हूँ, पर वह हैं कौन, उन का स्वरूप क्या है, मैं नहीं जानता । 'आवरण मिटाव ही साधना है', बस इस पथ पर अब चलता ही जाऊँ और इस से पुनरावृत्ति न हो, यही याचना है । मैं आज अनुभव से मान रहा हूँ कि लक्ष्य ही नहीं, पथ भी महत्त्वपूर्ण है ।

❖ ❖ ❖

श्याम ने देख री जन्म लिया

महफिल असुरन की रे थी, वहीं पे देख री जन्म लिया।
असुरन् के ही लोक में, श्याम ने देख री जन्म लिया।।१८।।

अहंकार का देख मना, काल देख है आ रहा।
पाप का घड़ा कह लो, स्वतः है भरता जा रहा।।२७।।

विभिन्न असुर वह भेज करी, नाम मिटाना चाहता है।
अपने नाते को ही लो, राह में ही वह पाता है।।

याद रहे यह दैवी है, दिव्य जन्म है हो चुका।
धर्म मिटाव के बेले ही, जन्म वचन का हो चुका।।

नाम में इतना बल है, जो आये वह भस्म भये।
नाम बाण ही ऐसा है, द्वेष की अन्तिम रस्म भये।।

हर असुर का वध भये, एक असुर जब न रहे।
केवल अहम् रे रह जाये, रक्षा क्योंकर निज करे।।

राम जन्म है हो चुका, मनो नमन है हो चुका।
राम चक्र अरे देख ज़रा, कुछ तो तीव्र भी हो चुका।।

यही चक्र हैं कृष्ण के, कर में जो रे होता है।
राम नाम का चक्र ही, जान मना वह होता है।।६०।।

जो अरि आगे बढ़े, चक्र यह रे चलता रहे।
यह चक्र ही जा करके, अरि दमन रे करता है।।

❖ ❖ ❖

परम पूज्य माँ

अर्पणा

समाचार पत्र

अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन,
करनाल, हरियाणा
अगस्त 2022

अर्पणा आश्रम

परम पूज्य माँ से प्राप्त अमूल्य निधि -'उर्वशी' का समारोह

26 अगस्त को प्रत्येक वर्ष परम पूज्य माँ का जन्म दिन, 'अर्पणा दिवस' के रूप में मनाया जाता है। उनके जीवन की दिव्यता, शब्दों की सुन्दरता एवं उनमें निहित प्रेम से प्रेरित अर्पणा के सभी मित्रगण, श्रद्धालू भक्त, अर्पणा वासी एवं अर्पणा सेवा कार्यक्रमों से पूर्ण स्टाफ के सभी सदस्य, समाधि स्थल पर अपना-अपना आभार व्यक्त करने के लिये एकत्रित हुए।

'उर्वशी ललित कला अकादमी' - परम पूज्य माँ के संदेश को सम्पूर्ण समुदाय, समाज एवं पूरे जगत में प्रसार का यह भी एक माध्यम है!

निर्देशक श्री कृष्ण अरोड़ा ने पूज्य माँ के प्रेरक और ज्ञानवर्धक शब्दों को संगीत के सुरों में पिरो कर भजनों को मधुर संगीत दिया है। परम पूज्य माँ के जन्म दिवस समारोह के उपलक्ष्य में 21, 22 एवं 25 अगस्त को क्रमशः 'अपना आशियाना', 'सोशल वर्कर्ज़ होम' एवं 'अर्पणा आश्रम' में तीन 'भजन संध्या' आयोजित की गईं।

'श्रेय और प्रेय पथ' के विषय को परम पूज्य माँ ने गहन परन्तु सरल ज्ञान द्वारा साधकों को समझाया, जिसे गायन रूप में श्रीमती विनीता गुप्ता द्वारा अपने मधुर स्वर में प्रस्तुत किया गया। पूज्य माँ के स्वतः स्फुरित प्रवाह से अन्य कुछ भजनों का गायन भी किया गया.. जिन्हें सुनकर जिज्ञासु आनन्द से झूम उठे। यह कार्यक्रम ज़ूम पर भी उपलब्ध रहा।

उसी दिन शाम को अर्पणा की एक उत्तम प्रस्तुति - नृत्य नाटिका 'कृष्ण सुदामा' को दिखाया गया, जिसमें भगवान के बाल्यावस्था की मित्रता के दिव्य प्रेम एवं नम्रता को दर्शाया गया है।

यह कार्यक्रम भी ज़ूम पर उपलब्ध रहा।

सम्पूर्ण जगत के स्वामी अपने सखा की सेवा में..

अर्पणा अस्तपाल

डॉ. राहुल गुप्ता द्वारा एंडोस्कोपी की गई

अर्पणा अस्पताल में मल्टी स्पेशलिटी शिविर मासिक रूप से आयोजित किए जाते हैं.. अर्पणा का लक्ष्य अपने आस पास के क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवा प्रदान करना है, विशेष रूप से ग्रामीण लोगों के लिए।

इन आयोजित शिविरों में जाँच के लिये अवश्यक टैस्ट एवं निदान के लिये आधुनिक दवाएँ भी उपलब्ध कराई जाती हैं। यहाँ 10 जुलाई को 186 रोगी एवं अगस्त में 101 रोगी लाभान्वित हुए।

माउंट लिटरा ज़ी स्कूल में 30 जुलाई को अर्पणा अस्पताल के डेंटल विभाग द्वारा फ्री डेंटल शिविर का आयोजन किया गया। उन्होंने बच्चों के भोजन के सेवन एवं दैनिक दिनचर्या के विषय में उनका मार्गदर्शन भी किया। यहाँ 357 छात्रों की जाँच भी की गई।

बुढाखेड़ा में अर्पणा का स्वास्थ्य शिविर - 22 जुलाई को इसमें विभिन्न चिकित्सा समस्याओं से पीड़ित 50 से भी अधिक रोगियों की जाँच की गई एवं उन्हें दवाएँ भी मुफ्त दी गईं।

नेत्र शिविर- प्रत्येक माह 12 शिविर आस पास के गाँवों में आयोजित किए जा रहे हैं। हर महीने क़रीब 1,600 रोगियों की जाँच की जाती है।

हरियाणा

रोज़गार के अवसरों के लिए अर्पणा द्वारा कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रम का परिणाम

एक सफल मॉडल को रन वे पर चलते और प्रशंसा पाते हुए देखना आम बात है, लेकिन जो बात दिल को छू गई, वह है रैंप पर इन ग्रामीण लड़कियों का आत्मविश्वास!

19 जुलाई को, 26 आर्थिक रूप से वंचित ग्रामीण लड़कियों ने हरियाणा के मोदीपुर गाँव में 400 ग्रामीण दर्शकों के लिए आकर्षक, ग्लैमरस, पारंपरिक भारतीय परिधान पहनकर, रैंप वॉक किया!

इन 26 लड़कियों ने ब्यूटी कल्चर या टेलरिंग के लिये अर्पणा के 'स्किल प्रोग्राम' से प्रशिक्षण प्राप्त किया था। उन्होंने ही ग्रामीण लोगों के लिए एक फैशन शो का आयोजन किया, जिन्होंने अब तक केवल टी वी या फिल्मों पर ही ऐसे कार्यक्रम देखे थे!

यह फैशन शो नृत्य, मेहंदी प्रतियोगिताओं और गायन प्रदर्शन का एक सुअवसर भी था एवं 400 से भी अधिक महिलाओं के लिए एक मनोरंजनपूर्ण कार्यक्रम!

टाइड्स फाउंडेशन, इंडिया डेवलपमेंट एंड रिलीफ फंड और कल्पना और जयदेव देसाई (यूएसए) और अर्पणा ग्वेर्नज़े के दोस्तों के प्रति हमारी गहरी कृतज्ञता!

दिल्ली के कार्यक्रम

'ऑनलाइन' स्पोकन इंग्लिश क्लासेज़

श्रीमती आराधना तलवार मई 2022 से मोलरबंद के अर्पणा केंद्र में छात्रों के लिए अंग्रेज़ी भाषा में बातचीत करने की कक्षाओं का 'ऑनलाइन' संचालन कर रही हैं। वह सप्ताह में 5 दिन (सोमवार से शुक्रवार) 2 दैनिक सत्र आयोजित करती हैं - सुबह 10 बजे लड़कियों के साथ और दूसरा शाम 6 बजे लड़कों के साथ। यहाँ सत्र के दौरान, सीखने के उत्सुक छात्रों को केवल अंग्रेज़ी में बोलने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

- उनके उच्चारण को सही करने के लिए पठन कक्षाएं आयोजित की जाती हैं।
- कठिन शब्दों को ले कर उनके अर्थों को विस्तार से समझाया जाता है।
- छात्र किसी राज्य विशेष या देश पर रिपोर्ट तैयार करने के लिए उत्साहपूर्वक इंटरनेट पर खोज भी करते हैं।
- इंटरव्यू में पूछे जाने वाले विशिष्ट प्रश्नों के साथ एक मॉक जॉब इंटरव्यू आयोजित किया गया।

सभी छात्र अपनी परिस्थितियों को सुधारने के लिए प्रतिबद्ध थे और अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उन्होंने कड़ी मेहनत की। यह एक सतत कार्यक्रम है, जिसकी कक्षाएं अगस्त में फिर से शुरू हो रही हैं।

ज्ञान आरंभ, वसंत विहार

जैसे ही अर्पणा केंद्र में शैक्षणिक वर्ष शुरू होता है, हमारा ध्यान शैक्षिक गतिविधियों पर होता है, जिसमें मूलभूत कौशल के निर्माण पर बल दिया जाता है।

छात्रों को पर्यावरण से जोड़ने के साथ साथ व्यावहारिक शिक्षा भी दी जाती है। शिक्षक कई गतिविधियों से अवधारणाओं का निर्माण करते हैं।

हमारी सभी कक्षाओं में अंग्रज़ी में बोलने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है

इस साल हमने कक्षा 3 से कक्षा 9 तक कंप्यूटर की कक्षाएं फिर से आरम्भ की हैं।

हमारी शिक्षिका मिस निदाम द्वारा सप्ताह में दो बार हमारे पूर्व छात्रों को भी प्रारम्भिक कंप्यूटर सिखाया जाता है।

सरल योग अभ्यासों द्वारा
अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाया गया

प्राथमिक कक्षाओं में कहानी सुनाना हमारी नियमित गतिविधियों में से एक है। हमारी विज्ञान कक्षाओं में शिक्षक प्रयोगों का प्रदर्शन करते हैं ताकि अवधारणाएं अच्छी तरह से समझ में आ जाएं।

एस्सेल फाउंडेशन, नई दिल्ली, अवीवा पीएलसी, यूके, केयरिंग हैंड फॉर चिल्ड्रन, यूएसए और अर्पणा कनाडा से समर्थन के लिए अर्पणा की गहरी कृतज्ञता!

हिमाचल प्रदेश कार्यक्रम

अर्पणा द्वारा छोटे किसानों को जैविक खेती के लिए प्रोत्साहित किया जाता है!

पर्यावरण के क्षरण से निपटने के लिए जैविक खेती एक आशाजनक ढंग है। अर्पणा छोटे किसानों के लिए जैविक खेती के बारे में उत्साहित है क्योंकि यह उनके परिवारों के लिए स्वस्थवर्धक है। पर्यावरण स्थिरता के साथ साथ भविष्य के लिये भी यह एक अच्छा विकल्प है और इसी से ही उनके छोटे कृषि भूखंडों का सबसे लाभदायक उपयोग हो सकता है।

अर्पणा, किसानों के लिए जैविक खेती सिखाने के सरकारी प्रयासों में शामिल हो रही है। हिमाचल किसान आउटरीच सेंटर के डॉ. सुशील कुमार ने 30 जून को अर्पणा के गजनोई केंद्र में जैविक खेती कार्यशाला का आयोजन किया। इसमें 40 महिला और 14 पुरुष किसानों ने भाग लिया।

अर्पणा हिमाचल में समर्थन के लिए टाइड्ज़ फाउंडेशन (यूएसए), बैजनाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट (नई दिल्ली) और अर्पणा ग्वेर्नज़े की बहुत आभारी हैं!

Your compassionate support sustains Arpana's Service

<u>To donate, click:</u>

http//:arpanaservices.org/your-support-empowers-arpana%E2%80%99s-programs

Arpana Trust and Arpana Research & Charities Trust are both approved under Section 80G of the Income Tax Act, 1961, giving 50% tax relief for donors in India.

❖ Send donations to **<u>Arpana Trust</u>** for disseminating humane values and for medical, educational and community welfare services in Delhi

❖ Send donations to **<u>Arpana Research & Charities Trust</u>** for health & development: including Arpana Hospital and empowering women and subsistence farmers in Haryana & Himachal Pradesh

<u>Foreign Contributions:</u> (A Temporary Hold on FCRA approval for AT and ARCT. Please hold donations.)

<u>Please let us know by email or telephone, whenever you transfer funds to Arpana</u>.

Information & Resources Office: 91-184-2390905 Executive Director: 91-9818600644

emails: at@arpana.org and arct@arpana.org

Contact person: Mrs. Aruna Dayal, Director Development. Mobile 91-9991687310

emails: at@arpana.org and arct@arpana.org

Websites: www.arpana.org www.arpanaservices.org